बिन्दु में सिन्धु

डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

बिन्दु में सिन्धु

(सूक्तिसुधा में से निकाले हुए बिन्दु)

लेखक :

डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम. ए., पीएच. डी.

सम्पादक :

ब्र. यशपाल जैन

एम. ए., जयपुर

प्रकाशक :

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट

ए-4, बापूनगर, जयपुर-302015

हिन्दी : प्रथम पाँच संस्करण (१३ मार्च, २००० से अद्यतन)	:	२७ हजार
षष्टम् संस्करण (२५ दिसम्बर, २००७)	:	१ हजार
गुजराती : प्रथम संस्करण	:	५ हजार
कुल योग	:	३३ हजार

मूल्य : दो रुपए पचास पैसे

प्रस्तुत संस्करण की कीमत कम करने वाले दातारों की सूची

१. श्री जगनमलजी सेठी, जयपुर १०००

२. श्रीमती पानादेवी मोहनलालजी सेठी, गोहाटी १५१

कुल योग १,१५१

मुद्रक :
प्रिन्ट 'ओ' लैण्ड
बाईस गोदाम,
जयपुर

प्रकाशकीय

डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल जैनदर्शन के मर्मज्ञ विद्वानों में अग्रणी हैं। वे कुशल वक्ता तो हैं ही, लेखन के क्षेत्र में भी उनका कोई सानी नहीं है। अबतक आपके द्वारा सृजित ६७ छोटी-बड़ी पुस्तकों का देश की विभिन्न भाषाओं में लगभग ४२ लाख से अधिक की संख्या में प्रकाशन हो चुका है, जो एक रिकार्ड है।

इस कृति में डॉ. भारिल्ल के अब तक प्रकाशित साहित्य में से महत्त्वपूर्ण अंशों को चुनकर प्रकाशित किया गया है। इसप्रकार यह कृति देखने में अवश्य लघुकाय है, परन्तु वास्तव में 'बिन्दु में सिन्धु' नाम को सार्थक करते हुए इसमें अपार सम्पदा भरी पड़ी है।

यदि इस साहित्यसिन्धु में आपको कुछ रोचक व सारगर्भित लगे तो आप उनके सम्पूर्ण साहित्य को एक बार अवश्य पढ़ें। साहित्य सूची पृथक् से प्रकाशित है।

१५ दिसम्बर, २००७ — ब्र. यशपाल जैन, एम.ए.

प्रकाशन मंत्री, पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर

संपादकीय

आज के इस व्यस्ततम युग में साहित्यसिन्धु में गोता लगाने का समय किसी के पास नहीं है। यही कारण है कि बड़े-बड़े ग्रन्थों का स्वाध्याय बहुत कम हो गया है। विषय की गंभीरता, प्रस्तुतीकरण की जटिलता और भाषा की समस्या से भी जिनागम के स्वाध्याय में बाधा पहुँची है।

यद्यपि डॉ. भारिल्ल का साहित्य सरल भाषा और सुलभ शैली में लिखा गया है। इसीकारण पढ़ा भी सर्वाधिक जाता है; तथापि उसने भी एक विशाल सिन्धु का रूप ले लिया है। लगभग छह हजार पृष्ठों में भी नहीं समानेवाले उनके साहित्य में जिनागम से संबंधित लगभग सभी विषयों का समावेश हुआ है और उसमें अध्यात्म भी तिल में तेल की भांति समाहित है। यद्यपि उनका साहित्य सर्वाधिक पढ़ा जानेवाला साहित्य है; तथापि ऐसे भी लोग हैं, जो समय की कमी के कारण उसके अध्ययन से वंचित हैं। उनको ध्यान में रखकर ही हमने इस कृति में उनके साहित्यसिन्धु को समाने का प्रयास किया है।

इन छोटे-छोटे बिन्दुओं में वे सभी मुख्य बातें आ गई हैं, जो उनके विशाल साहित्यसिन्धु के गर्भ में समाहित हैं। उनके साहित्य का दोहन ही सूक्तिसुधा है और यह उसका नवनीत है। इसमें जो कुछ भी है, गहराई से देखने पर वह सब सूक्तिसुधा में मिल जायगा।

— ब्र. यशपाल जैन

बिन्दु में सिन्धु

१. जैनदर्शन का मार्ग पूर्ण स्वाधीनता का मार्ग है।

२. आज का जागृत समाज निर्माण को चुनेगा विध्वंस को नहीं।

३. अशान्त चित्त में लिया गया कोई भी निर्णय आत्मा के हित के लिए तो होता ही नहीं है, समाज के लिए भी उपयोगी नहीं होता है।

४. गोली का जवाब गोली से देने की बात तो बहुत दूर, हमें तो गोली का जवाब गाली से भी नहीं देना है।

५. तत्त्व का प्रचार लड़कर नहीं किया जा सकता।

६. तत्त्वदृष्टि की एकरूपता ही वास्तविक वात्सल्य उत्पन्न करती है।

७. विरोध प्रचार की कुंजी है।

८. स्वयं शान्त रहनेवालों की शान्ति को भंग कौन कर सकता है?

९. उत्तेजनात्मक हथकण्डों की उम्र बहुत कम होती है।

१०. कोई किसी का शाश्वत विरोधी और मित्र नहीं होता।

११. हमें विरोधियों को नहीं, विरोध को मिटाना है।

१२. क्रान्ति में हृदयपक्ष की प्रधानता रहती है, भावनापक्ष प्रधान रहता है; पर शान्तिकाल में बुद्धि की परीक्षा की घड़ी आती है। क्रांति विध्वंस करती है और शान्ति निर्माण।

१३. लड़ाती कषाय है, स्वार्थ है और बदनाम धर्म होता है।

१४. व्यक्ति की ऊँचाई का आधार उसकी योग्यता और आचार--विचार है, न कि जन्म।

१५. व्यक्ति विशेष की महिमा से सम्प्रदाय पनपते हैं और गुणों की महिमा से धर्म की वृद्धि होती है।

१६. किसी का मन तलवार की धार से नहीं पलटा जा सकता।

१७. खून का धब्बा खून से नहीं धुलता। उत्तेजना, उत्तेजना से शान्त नहीं होती।

१८. जैनधर्म कोई मत या सम्प्रदाय नहीं है, वह तो वस्तु का स्वरूप है, वह एक तथ्य है, परमसत्य है।

१६. पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त करने का मार्ग स्वावलंबन है।

२०. एकता का आधार समानता ही हो सकती है।

२१. भय का वातावरण अज्ञान और कषाय से बनता है।

२२. अंधश्रद्धा तर्क स्वीकार नहीं करती।

२३. भावुकता से तथ्य नहीं बदला करते।

२४. निर्णय न्याय से ही सम्भव है।

२५. कर्त्तृव्य की ठोकर, बुद्धि ही बर्दाश्त कर सकती है, हृदय नहीं।

२६. बिना नैतिक और धार्मिक जीवन के आध्यात्मिक साधना संभव नहीं है।
२७. 'अपनी मदद आप करो' – यही महासिद्धान्त है।
२८. वाणी विचारों की वाहक है।
२९. अन्दर में पात्रता हो तो भाषा कोई समस्या नहीं है।
३०. प्रत्येक सिद्धान्त तभी मान्य होता है, जब वह प्रयोगों में खरा उतरे।
३१. चाह आज तक किसी की भी पूरी नहीं हुई।
३२. रुचि की प्रतिकूलता में सद्भाग्य भी दुर्भाग्यवत् फलते हैं।
३३. गलत प्रस्तुतिकरण सत्य बात को भी विकृत कर देता है।
३४. समझ अन्दर से आती है, बाहर से नहीं।
३५. निजत्व बिना सर्वस्व समर्पण नहीं होता।
३६. वियोग होना संयोगों का सहज स्वभाव है।

३७. पात्रता ही पवित्रता की जननी है।

३८. धार्मिक आदर्श भी ऐसे होने चाहिए, जिनका संबंध जीवन की वास्तविकताओं से हो।

३९. वास्तविक सेवा तो स्व और पर को आत्महित में लगाना है।

४०. मुक्ति के मार्ग का उपदेश ही हितोपदेश है।

४१. आत्मानुभव की प्रेरणा देना ही सच्चा पाण्डित्य है।

४२. अखण्ड आत्मा की उपलब्धि ही जीवन की सार्थकता है।

४३. दृष्टि के सम्पूर्णतः निर्भार हुए बिना अन्तर प्रवेश सम्भव नहीं।

४४. आध्यात्मिक धारा त्यागमय धारा है।

४५. नाशाग्रदृष्टि आत्मदर्शन और अप्रमाद की प्रतीक है।

४६. श्रावकधर्म योगपक्ष और भोगपक्ष का अस्थाई समझौता है।

४७. हथियार सुरक्षा के साधन नहीं, मौत के ही सौदागर हैं।

४८. आक्रमण प्रत्याक्रमण को जन्म देता है।

४९. वस्तु नहीं, मात्र दृष्टि बदलनी है।

५०. फेरफार करने के भार से बोझिल दृष्टि में यह सामर्थ्य नहीं कि वह स्वभाव की ओर देख सके।

५१. जो आस्थाएँ हृदय में गहरी पैठ जाती हैं, वे सहज समाप्त नहीं होतीं।

५२. हमें मरण नहीं, जीवन सुधारना है।

५३. दूसरों से कटने का मौन सबसे सशक्त साधन है।

५४. मिथ्या रुचि और राग निर्णय को प्रभावित करते हैं।

५५. नित्यता की नियामक अनन्तता ही है।

५६. अशुद्धता शाश्वत नहीं है।

५७. जबतक स्वयं परखने की दृष्टि न हो, उधार की बुद्धि से कुछ लाभ नहीं होता।

५८. दुःखों से, विकारों से, बंधनों से मुक्त होना ही मोक्ष है।

५९. सिद्धान्तशास्त्रों के गहन अध्येता का अभिनंदन वास्तव में एक प्रकार से सिद्धान्त शास्त्रों का ही अभिनंदन है।

६०. भावशून्य क्रिया कभी भी वांछित फल नहीं दे सकती।

६१. हृदय परिवर्तन का जो काम है, वह समय सापेक्ष होता है।

६२. आत्मोन्मुखी दृष्टि ही दूरदृष्टि है।

६३. अकर्तावाद यानी स्वयं कर्तावाद।

६४. आज की दुनिया संघर्ष की नहीं, सहयोग की दुनिया है।

६५. विवादों में उलझकर चित्त को कलुषित करते रहना मानव जीवन की सबसे बड़ी हार है।

६६. मार्ग अन्तर की रुचि से ही मिलेगा, पर के भरोसे कुछ नहीं होगा।

६७. असफलता के समान सफलता का पचा पाना भी हर एक का काम नहीं।

६८. भटकना श्रद्धा का दोष है और अटकना चारित्र की कमजोरी है।

६९. वस्तुतः बंधन की अनुभूति ही बंधन है।

७०. पवित्र कहते ही उसे हैं, जिसको छूने से छूनेवाला पवित्र हो जाए।

७१. भगवान आत्मा की बात समझाना, भगवान आत्मा के दर्शन करने की प्रेरणा देना, अनुभव करने की प्रेरणा देना, आत्मा में ही समा जाने की प्रेरणा देना ही सच्चा प्रवचन है।

७२. सम्यक् समझ बिना ग्रहण और त्याग संभव ही नहीं है।

७३. धार्मिक पर्व तो वीतरागता की वृद्धि करनेवाले संयम और साधना के पर्व हैं।

७४. अभाव का अनुभव करनेवाला असन्तुष्ट और सद्भाव का अनुभव करनेवाला सन्तुष्ट नजर आता है।

७५. जो तत्त्व से बंधेगा, वही वास्तविक साथी होगा।

७६. युद्धक्षेत्र में पर को जीता जाता है और धर्मक्षेत्र में स्वयं को।

७७. विषय का सर्वांग अनुशीलन ही द्वन्द्व और संघर्ष से बचने का एकमात्र उपाय है।

७८. जिन्हें त्रिकाली सत् का परिचय नहीं, वे सत्पुरुष नहीं; उनकी संगति भी सत्संगति नहीं है।

७९. जिनवाणी का अध्ययन उलझना नहीं, सुलझना है और पण्डित बनना हीनता की नहीं, गौरव की बात है।

८०. रुचि ध्यान की नियामक है।

८१. नारी सहज श्रद्धामयी भावनाप्रधान प्राणी है।

८२. जिसके हृदय में अपराध भावना होती है, उसकी आँख नीची हुए बिना नहीं रहती।

८३. क्रोधादि मनोविकारों से आत्मा को भिन्न जानना ही विवेक है।

८४. वास्तविक तत्त्वज्ञान ही विवेक है।

८५. विवेक के बिना जीव जहाँ भी जायेगा ठगा जायेगा।

८६. बिना विवेक के श्रद्धा अंधी होती है।

८७. सत्यासत्य का निर्णय हृदय से नहीं, बुद्धि से - विवेक से होता है।

८८. विवेकी का मार्ग आलोचना का मार्ग नहीं।

८९. विवेकी वक्ता को सहिष्णु अवश्य बनना चाहिए।

९०. विवेकी को रचनात्मक मार्ग अपनाना चाहिए।

९१. अनुशासन-प्रशासन हृदय से नहीं, बुद्धि से चलते हैं।

९२. सफलता, विवेक के धनी कर्मठ बुद्धिमानों के चरण चूमती है।

९३. ज्ञानियों की भक्ति उनके प्रमुदित मन का परिणाम होती है।

६४. ज्ञानी भक्त आत्मशुद्धि के अलावा और कुछ नहीं चाहता।

६५. आत्मार्थी का मूल ज्ञेय निजात्मा है, शेष सब प्रासंगिक।

६६. आत्मार्थी तो आत्मा की रुचि और आराधना से ही होता है।

६७. पुरुषार्थहीनता और भोगों में लीनता मिथ्यात्व की भूमिका में ही होते हैं।

६८. धर्मात्मा के लौकिक कार्य सहज ही सधे तो सधे, पर उनके लक्ष्य से धर्मसाधन करना ठीक नहीं है।

६९. तीव्र कषायी अज्ञानी जीवों से की गई तत्त्वचर्चा उनके क्रोध को ही बढ़ाती है।

१००. मुक्ति के मार्ग में आत्मानुभव की प्राप्ति का प्रयास ही पुरुषार्थ है।

१०१. जो सही दिशा में सही पुरुषार्थ करता है, वह उद्यमी पुरुष ही सफल होता है।

१०२. चाह स्वयं दुःखरूप है, चाह का अभाव ही सुख है।
१०३. संयोगों में सुख खोजना समय और शक्ति का अपव्यय है।
१०४. स्वभावदृष्टिवन्त ही वस्तुतः सुखी होता है।
१०५. सुखी होने का सही रास्ता सत्य पाना है, सत्य समझना है।
१०६. मूढ़भाव अनन्त आकुलता का कारण है।
१०७. संयोगाधीन दृष्टि संसारदुःखों का मूल है।
१०८. आत्मीय सद्गुणों में अनुराग को भक्ति कहते हैं।
१०९. पूजा-भक्ति का सच्चा लाभ तो विषय-कषाय से बचना है।
११०. विषयों की आशा से भगवान की भक्ति करनेवाला भगवान का भक्त नहीं, भोगों का भिखारी है।
१११. अन्य दर्शनों की अहिंसा जहाँ समाप्त होती है, जैनदर्शन की अहिंसा वहाँ से आरम्भ होती है।
११२. वस्तुतः अहिंसा तो वीतराग परिणति का नाम है।

११३. परमसत्य की स्वीकृति ही भगवती अहिंसा की सच्ची आराधना है।

११४. वीरता हिंसा की पर्याय नहीं, अहिंसा का स्वरूप है।

११५. हिंसात्मक प्रवृत्तियों से देश और समाज नष्ट होते हैं।

११६. द्वेषमूलक हिंसा भी मूलतः रागमूलक ही है।

११७. जीवदया जैनाचार का मूल आधार है।

११८. जैनाहार विज्ञान का मूल आधार अहिंसा है।

११९. अंडे को शाकाहारी बताना अंडे के व्यापारियों का षड्यंत्र है, जिसके शिकार शाकाहारी लोग हो रहे हैं।

१२०. भगवान जन्मते नहीं, बनते हैं।

१२१. भगवान की शरण में जानेवाले भगवानदास बनते हैं, भगवान नहीं।

१२२. तीर्थंकर भगवान वस्तुस्वरूप को जानते हैं, बताते हैं; बनाते नहीं।

१२३. मंदिर के विकृत हो जाने से उसमें विराजमान देवता विकृत नहीं हो जाते।

१२४. भगवान धर्म की स्थापना नहीं करते, वरन् धर्म का आश्रय लेकर आत्मा से परमात्मा बनते हैं।

१२५. हम मूर्ति के नहीं, मूर्ति के माध्यम से मूर्तिमान (वीतरागी सर्वज्ञ भगवान) के पुजारी हैं।

१२६. शास्त्र का मर्म समझने के लिए बुद्धि की तीक्ष्णता चाहिए।

१२७. समाज के जागृत रहने पर ही तीर्थ सुरक्षित रहेंगे और जीवन्त तीर्थ जिनवाणी भी सुरक्षित रहेगी।

१२८. एकमात्र नग्नता ही (मुक्ति का) मार्ग है, शेष सब उन्मार्ग हैं।

१२९. जो अपने गुरु का निर्णय भी स्वयं से नहीं करना चाहता है, उसका ठगाया जाना तो निश्चित ही है।

१३०. भीड़ तो भयाक्रांत भोगी चाहते हैं, निर्भय योगी नहीं।

१३१. शत्रु-मित्र के प्रति समभाव रखनेवाले साधु ही सच्चे साधु हैं।

१३२. साधु को श्रुत के सागर की अपेक्षा संयम का सागर होना अधिक आवश्यक है।

१३३. साधु बनना अभिनय है, साधु होना वस्तुस्थिति है।

१३४. बिना आत्मज्ञान के तो कोई मुनि बन ही नहीं सकता।

१३५. दिगम्बर कोई वेष नहीं है, सम्प्रदाय नहीं है; वस्तु का स्वरूप है।

१३६. दिगम्बर मुनिधर्म ही दिगम्बर आम्नाय का मूल आधार है।

१३७. वीतरागी नग्न दिगम्बर साधु भी हमारे सिरमौर हैं।

१३८. मुनिजन क्षमा के भण्डार होते हैं।

१३९. सच्चा साधु होना सिद्ध होने जैसा गौरव है।

१४०. साधुता बंधन नहीं है, उसमें सर्वबंधनों की अस्वीकृति है।

१४१. आत्मा का ध्यान ही धर्म है।

१४२. ज्ञान आत्मवस्तु का स्वभाव है; अतः ज्ञान धर्म है।

१४३. धर्म परम्परा नहीं, स्वपरीक्षित साधना है।

१४४. धर्म परिभाषा नहीं, प्रयोग है और जीवन है धर्म की प्रयोगशाला।

१४५. धर्म का आधार तिथि नहीं, आत्मा है।

१४६. धर्म अविरोध का नाम है, विरोध का नहीं।

१४७. दिगम्बर जैनधर्म आत्मा का धर्म है, शरीर का नहीं।

१४८. मुक्ति का मार्ग शान्ति का मार्ग है, तनाव का नहीं, व्यग्रता का नहीं।

१४९. एक वीतरागभाव ही निरपराध दशा है; अतः वह मोक्ष का कारण है।

१५०. मोक्ष आत्मा की अनन्त आनन्दमय, अतीन्द्रिय दशा है।

१५१. भगवान आत्मा ही सम्पूर्ण श्रुतज्ञान का सार है।

१५२. पर को जानने में दोष नहीं; परन्तु पर में अटकने में, उलझने में तो हानि है ही।

१५३. सर्वप्रकार से स्नेह तोड़कर स्वयं में ही समा जाने में सार है।

१५४. ध्रुवधाम की आराधना आराधना का सार है।

१५५. धर्मपरिणत आत्मा को ही धर्मात्मा कहा जाता है।

१५६. श्रद्धेय, ध्येय, आराध्य तो एक निज भगवान आत्मा ही है।

१५७. भवताप का अभाव तो स्वयं के आत्मा के दर्शन से होता है।

१५८. आत्मा के सिद्धि के सम्पूर्ण साधन आत्मा में ही विद्यमान हैं।

१५९. सर्वसमाधानकारक तो अपना आत्मा है, जो स्वयं ज्ञानस्वरूप है।

१६०. अरहंत और सिद्ध भगवान निर्मल हैं और त्रिकाली ध्रुव भगवान आत्मा अमल है।

१६१. साधकों की साधना का एकमात्र आधार शुद्धात्मा है।
१६२. आत्मज्ञान और आत्मध्यान आत्मा के सहज धर्म हैं।
१६३. आत्मा का दर्शन, ज्ञान और ध्यान ही आत्मा में स्थापित होना है।
१६४. पर परमात्मा चाहे कितना ही महान क्यों न हो, उसमें सर्वस्व समर्पण सम्भव नहीं है, उचित भी नहीं है।
१६५. सभी आत्मा स्वयं परमात्मा हैं, परमात्मा कोई अलग नहीं होते।
१६६. आत्मा की सच्ची जीत तो मोह-राग-द्वेष के जीतने में है।
१६७. चित्त को जीत लेनेवालों को छह खण्डों की नहीं, अखण्ड आत्मा की प्राप्ति होती है।
१६८. मात्र मान्यता सुधारने को ही आत्मा का हित कहते हैं।
१६९. संयोगों की विनाशीकता भी आत्मा के हित में ही है।

१७०. अमर है ध्रुव आत्मा वह मृत्यु को कैसे वरे ?
१७१. संयोग क्षणभंगुर सभी पर आतमा ध्रुवधाम है।
१७२. जो खोजता पर की शरण वह आतमा बहिरातमा।
१७३. संसार संकटमय है परन्तु आतमा सुखधाम है।
१७४. पहिचानते निजतत्त्व जो वे ही विवेकी आतमा।
१७५. प्रिय ध्येय निश्चय ज्ञेय केवल श्रेय निज शुद्धात्मा।
१७६. जिसमें झलकते लोक सब वह आतमा ही लोक है।
१७७. है समयसार बस एक सार है समयसार बिन सब असार।
१७८. संतापहरण सुखकरण सार शुद्धात्मस्वरूपी समयसार।
१७९. मैं हूँ स्वभाव से समयसार परिणति हो जावे समयसार।
१८०. निज अंतर्वास सुवासित हो शून्यान्तर पर की माया से।
१८१. निज परिणति का सत्यार्थ भान शिवपद दाता जो तत्त्वज्ञान।
१८२. अपने में ही समा जाना भेदविज्ञान का फल है।

१८३. आत्मानुभूति ही समस्त जिनशासन का सार है।

१८४. जिनमत का वास्तविक प्रवर्तन तो आत्मानुभव ही है।

१८५. आत्मानुभूति ही सुखानुभूति है।

१८६. आत्मतन्मयता ही आत्मानुभूति का उपाय है।

१८७. आत्मानुभूति को प्राप्त करने का प्रारम्भिक उपाय तत्त्वविचार है।

१८८. आत्मानुभूति की दशा शुद्धभाव है और आत्मानुभूति प्राप्त करने का विकल्प शुभभाव।

१८९. ज्ञान से भी अधिक महत्त्व श्रद्धान का है, विश्वास का है, प्रतीति का है।

१९०. श्रद्धा ही आचरण को दिशा प्रदान करती है।

१९१. ज्ञान तो पर को मात्र जानता है, परिणमाता नहीं है।

१९२. ज्ञान का कोई भार नहीं होता।

१९३. ज्ञान सर्वसमाधानकारक है तथा उसका सर्वत्र ही अबाध प्रवेश है।

१९४. ढ़ाई अक्षर के आत्मा को जान लेना ही ज्ञान है, पाण्डित्य है।

१९५. ज्ञानस्वभावी आत्मा, ज्ञान से ही प्राप्त होगा; धन से नहीं।

१९६. दुःख का मूल कारण स्वयं को न जानना, न पहचानना ही है।

१९७. इन्द्रियज्ञान आत्मज्ञान में साधक नहीं; बल्कि बाधक ही है।

१९८. जगत में ऐसा कौनसा प्रमेय है, जो सतर्क प्रज्ञा को अगम्य हो ?

१९९. स्वतंत्रता ज्ञान से नहीं, अपने अज्ञान से खण्डित होती है।

२००. राग-द्वेष कम करने का सरलतम उपाय अपने सुख-दुःख के कारण अपने में ही खोजना है, मानना है, जानना है।

२०१. विरोध वस्तु में नहीं अज्ञान में है।

२०२. विकारी भावों का परित्याग एवं उदात्त भावों का ग्रहण ही दशलक्षण धर्म का आधार है।

२०३. उत्तमक्षमा आदि का नाप बाहर से नहीं किया जा सकता।

२०४. क्रोध मानादि को हटाना क्षमा है, दबाना नहीं।

२०५. क्षमा कायरता नहीं, क्षमाधारण करना कायरों का काम भी नहीं।

२०६. ज्ञानानंदस्वभावी आत्मा की अरुचि ही अनंतानुबंधी क्रोध है।

२०७. क्रोधादि जब भी होते हैं, परलक्ष्य से ही होते हैं।

२०८. प्रतिकूलता में क्रोध और अनुकूलता में मान आता है।

२०९. क्रोधी वियोग चाहता है; पर मानी संयोग।

२१०. असफलता क्रोध और सफलता मान की जननी है।

२११. निंदा की आँच जिसे पिघला भी नहीं पाती, प्रशंसा की ठंडक उसे छार-छार कर देती है।

२१२. प्रशंसा निंदा से अधिक खतरनाक है।

२१३. छोटे-बड़े की भावना मान का आधार है।

२१४. मान का आधार 'पर' नहीं, पर को अपना मानना है।

२१५. मान एक मीठा जहर है।

२१६. जिसका मान होता है उसकी सत्ता हो ही, यह आवश्यक नहीं। अतः धन मद होने के लिए धन की उपस्थिति आवश्यक नहीं।

२१७. जगत के कायिक जीवन में उतनी विकृति नहीं, जितनी की जन-जन के मनों में है।

२१८. लौकिक कार्यों की सिद्धि मायाचार से नहीं, पूर्व पुण्योदय से होती है।

२१९. जो जिसका कर्ता-धर्ता-हर्ता नहीं है, उसे उसका कर्ता-धर्ता-हर्ता मानना ही अनन्त कुटिलता है।

२२०. वीतरागता ही वास्तविक शौचधर्म है।

२२१. सबसे खतरनाक कषाय लोभ है और सबसे बड़ा धर्म शौच है।

२२२. प्रेम या प्रीति भी लोभ के ही नामान्तर हैं।

२२३. यश के लोभियों को प्रायः निर्लोभी मान लिया जाता है।

२२४. लोभी व्यक्ति मानापमान का विचार नहीं करता।

२२५. लोभ तो पाप नहीं, पाप का बाप है।

२२६. सत्य कहते ही उसे है, जिसकी लोक में सत्ता हो।

२२७. सत्य का उद्घाटन सत्य को समझना ही है।

२२८. सत्य की प्राप्ति स्वयं से, स्वयं में, स्वयं के द्वारा ही होती है।

२२९. सत्य को स्वीकार करना ही सन्मार्ग है।

२३०. सत्य के खोजी को सत्य प्राप्त होता ही है।

२३१. समझौते का आधार सत्य नहीं, शक्ति होती है।

२३२. संगठन से सत्य बहुत मजबूत होता है।

२३३. सत्य और शान्ति समझ से मिलती है, समझौते से नहीं।

२३४. सत्य नहीं, सत्य की खोज खो गई है। सत्य को नहीं, सत्य की खोज को खोजना है।

२३५. जिनकी सत्ता है, वे सभी सत्य हैं।

२३६. निर्भयता सत्य के आधार पर आती है, कल्पना के आधार पर नहीं।

२३७. सत्य बोलने के लिए सत्य जानना जरुरी है।

२३८. संयम मुक्ति का साक्षात् कारण है।

२३९. संयम की सर्वोत्कृष्ट दशा ध्यान है।

२४०. आत्मस्वरूप में लीनता ही तप है।

२४१. तप आत्मा की वीतराग परिणतिरूप शुद्धभाव का नाम है।

२४२. स्वाध्याय और ध्यान अंतरंग तप हैं और तपों में सर्वश्रेष्ठ हैं।

२४३. विनय अपने आप में महान आत्मिक दशा है।

२४४. वास्तविक स्वाध्याय तो आत्मज्ञान का प्राप्त होना ही है।

२४५. आत्माराधना ही वस्तुतः परमार्थप्रतिक्रमण है।

२४६. त्याग धर्म है और दान पुण्य।

२४७. पर को पर जानकर उनके प्रति राग का त्याग करना ही वास्तविक त्याग है।

२४८. त्याग तो अपवित्र वस्तु का ही किया जाता है।

२४९. त्याग के लिए हम पूर्णतः स्वतन्त्र हैं।

२५०. बिना माँगे दिया गया दान सर्वोत्कृष्ट है।

२५१. दान निर्लोभियों की क्रिया थी, जिसे यश और पैसे के लोभियों ने विकृत कर दिया है।

२५२. अपरिग्रह का उत्कृष्टरूप नग्न दिगम्बर दशा है।

२५३. ब्रह्मचर्य तो एकदम अंतर की चीज है, व्यक्तिगत चीज है।

२५४. इन्द्रियों के विषय चाहे वे भोग्यपदार्थ हों, चाहे ज्ञेय पदार्थ, ब्रह्मचर्य के विरोधी ही हैं।

२५५. बारह भावनाओं के चिंतन का सच्चा फल तो वीतरागता है।

२५६. बारह भावनाओं के चिन्तन की एक आवश्यक शर्त यह है कि उसके चिन्तन से आनन्द की जागृति होनी चाहिए।

२५७. वैराग्यवर्धक बारह भावनाएँ मुक्तिपथ का पाथेय तो हैं ही, लौकिक जीवन में भी अत्यन्त उपयोगी हैं।

२५८. वैराग्योत्पादक तत्त्वपरक चिन्तन ही अनुप्रेक्षा है।

२५९. निजतत्त्व को पहिचानना ही भावना का सार है।

२६०. भोर की स्वर्णिम छटा सम क्षणिक सब संयोग हैं।

२६१. पद्मपत्रों पर पड़े जलबिन्दु सम सब भोग हैं।

२६२. अनित्यता के समान अशरणता भी वस्तु का स्वभाव है।

२६३. पर के शरण की आवश्यकता परतन्त्रता की सूचक है।

२६४. ध्रुवधाम आत्मा से विमुख पर्याय ही वस्तुतः संसार है।

२६५. संसार बिन्दु है तो लोक सिन्धु।

२६६. जिनागम का समस्त उपदेश भव के अभाव के लिए है।

२६७. दुःख का ही दूसरा नाम संसार है।

२६८. संयोगाधीन दृष्टि ही संसार का कारण है।

२६९. संयोग हैं सर्वत्र पर साथी नहीं संसार में।

२७०. भीड़ तो मात्र संयोग की सूचक है, साथ की नहीं।

२७१. एकत्व ही सत्य है, शिव है, सुन्दर है।

२७२. आत्मा का अकेलापन अभिशाप नहीं, वरदान है।

२७३. महानता तो एकत्व में ही है, अकेलेपन में ही है।

२७४. एकत्व ही सनातन सत्य है, साथ की कल्पना मात्र कल्पना ही है।

२७५. आस्रव भावना में विभाव की विपरीतता का चिन्तन मुख्य होता है।

२७६. निज आत्मा के ध्यान बिन बस निर्जरा है नाम की।
२७७. बोधिदुर्लभ भावना का सार निजतत्त्व को पहिचानना ही है।
२७८. दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप बोधि ही इस जगत में दुर्लभ है।
२७९. बोधिदुर्लभ शब्द का अर्थ धर्म नहीं, धर्म की दुर्लभता है।
२८०. आध्यात्मिक जीवन का आधार एक शुद्धात्मा की साधना है।
२८१. इन्द्रिय सुख तो सुखाभास है, नाम मात्र का सुख है।
२८२. चाहे इन्द्रिय का भोगपक्ष हो, चाहे ज्ञानपक्ष दोनों में क्रम पड़ता है।
२८३. वस्तु उसे कहते है, जो कभी मिटे नहीं, सदा सत्‌रूप से ही रहे।
२८४. गलती सदा ज्ञान या वाणी में होती है, वस्तु में नहीं।
२८५. वस्तु में असत्य की सत्ता ही नहीं है।
२८६. ज्ञान का कार्य तो वस्तु जैसी है वैसी जानना है।

२८७. वस्तु में अच्छे-बुरे का भेद करना राग-द्वेष का कार्य है।

२८८. एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ भी भला-बुरा नहीं कर सकता, यह दिगम्बर धर्म का अपमान नहीं सर्वोत्कृष्ट सम्मान है; क्योंकि वस्तुस्वरूप ही ऐसा है।

२८९. वस्तु के सहज परिणमन का ध्यान आते ही सहज शांति उत्पन्न होती है।

२९०. विवक्षा-अविवक्षा वाणी के भेद हैं, वस्तु के नहीं।

२९१. प्रत्येक द्रव्य का परिणमन स्वयं के कारण स्वयं से होता है।

२९२. निरन्तर परिणमन ही द्रव्य का जीवन है।

२९३. स्वभाव में तो अपूर्णता की कल्पना भी नहीं की जा सकती।

२९४. कोई भी अपने परिणमन में परमुखापेक्षी नहीं है।

२९५. अपूर्णता के लक्ष्य से पर्याय में पूर्णता की प्राप्ति नहीं होती।

२९६. पर्यायों का सुधार तो द्रव्याधीन है।

२९७. होता वही है, जो होना होता है।
२९८. क्रमबद्धपर्याय में वस्तु की अनन्त स्वतन्त्रता की घोषणा है।
२९९. जो होना है सो निश्चित है केवलज्ञानी ने गाया है।
३००. क्रमबद्धपर्याय की सहज स्वीकृति में जीत ही जीत है, हार है ही नहीं।
३०१. कुछ करो नहीं, बस होने दो; जो हो रहा है, बस उसे होने दो।
३०२. क्रमबद्धपर्याय पुरुषार्थनाशक नहीं; अपितु पुरुषार्थ प्रेरक है।
३०३. वैराग्य तो अन्तर की योग्यता पकने पर काललब्धि आने पर होता है।
३०४. वस्तु के अंशों की गहन पकड़ तो नयज्ञान से ही होती है।
३०५. नय जैनदर्शन की अलौकिक उपलब्धि है।
३०६. सम्यक् एकान्त नय है और मिथ्या एकान्त नयाभास है।

३०७. नय अपर पक्ष को गौण करते हैं, अभाव नहीं।

३०८. आगम और अध्यात्म एक-दूसरे के विरोधी नहीं, अपितु पूरक हैं।

३०९. आगम के अध्ययन से अध्यात्म की पुष्टि होती है।

३१०. आगम का प्रतिपाद्य सन्मात्र वस्तु है और अध्यात्म का प्रतिपाद्य चिन्मात्र वस्तु है।

३११. आत्मा का साक्षात् हित करनेवाला तो अध्यात्म ही है।

३१२. वस्तुस्वरूप का मर्म तो अध्यात्म शास्त्रों में ही है।

३१३. अध्यात्म का मार्ग है कि 'समझना सब, जमना स्वभाव में'।

३१४. व्यवहार की कीमत भी निश्चय के प्रतिपादकत्व में ही है।

३१५. निमित्त होता है, पर करता नहीं।

३१६. आत्मार्थी को निमित्तों की खोज में व्यग्र नहीं होना चाहिए।

३१७. निमित्तों को दोष देना ठीक नहीं, अपनी पात्रता का विचार करना ही कल्याणकारी है।

३१८. स्याद्वाद संभावनावाद नहीं, निश्चयात्मक ज्ञान होने से प्रमाण है।

३१९. स्याद्वाद में कहीं भी अज्ञान की झलक नहीं है।

३२०. ध्यान चारित्र का सर्वोत्कृष्ट रूप है।

३२१. ध्यानमुद्रा ही धर्ममुद्रा है, सर्वश्रेष्ठ मुद्रा है।

३२२. केवल स्वयं की साधना आराधना ही धर्म है।

३२३. ध्यान की अवस्था में ही सर्वज्ञता की प्राप्ति होती है।

३२४. ध्येय का स्वरूप स्पष्ट हुए बिना ध्यान संभव नहीं है।

३२५. चिन्तन ध्यान का प्रारम्भिक रूप है।

३२६. कक्षाएँ ज्ञान की लग सकती हैं, ध्यान की नहीं।

३२७. ध्यान के लिए एकान्त चाहिए, भीड़ नहीं।

३२८. बातचीत पर से जोड़ती है और पर का सम्पर्क ध्यान में सबसे बड़ी बाधा है।

३२९. ध्यान के लिए निरापद स्थान वातानुकूलित घर नहीं, प्रकृति की गोद में बसे घने जंगल हैं, पर्वत श्रेणियाँ हैं।

३३०. सब जीवों को उन्नति के समान अवसरों की उपलब्धि ही सर्वोदय है।

३३१. वक्ता का सबसे बड़ा और मौलिक गुण है – सत्य के प्रति सच्ची जिज्ञासा और अनुभूत सत्य की प्रामाणिक अभिव्यक्ति।

३३२. स्वहित का आशय उपयोग की पवित्रता एवं ज्ञानवृद्धि से है।

३३३. दीपावली अंधकार में प्रकाश का पर्व है।

❖ ❖ ❖

लेखक के महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

०१.	समयसार ज्ञायकभाव प्रबोधिनी	५०.००
०२.	समयसार अनुशीलन भाग-१ (हिन्दी, गुजराती, मराठी)	२५.००
०३.	समयसार अनुशीलन भाग-२ (हिन्दी, गुजराती)	२०.००
०४.	समयसार अनुशीलन भाग-३ (हिन्दी, गुजराती)	२०.००
०५.	समयसार अनुशीलन भाग-४	२०.००
०६.	समयसार अनुशीलन भाग-५	२५.००
०७.	प्रवचनसार अनुशीलन भाग-१	३५.००
०८.	प्रवचनसार अनुशीलन भाग-२	३५.००
०९.	प्रवचनसार का सार	३०.००
१०.	समयसार का सार (हिन्दी, गुजराती)	३०.००
११.	पण्डित टोडरमल व्यक्तित्व और कर्तृत्व	२०.००
१२.	परमभावप्रकाशक नयचक्र (हिन्दी, गुजराती)	२०.००
१३.	चिन्तन की गहराइयाँ	२०.००
१४.	तीर्थंकर महावीर और उनका सर्वोदय तीर्थ (हिन्दी, गुजराती, मराठी, कन्नड़, तमिल, अंग्रेजी)	१५.००
१५.	धर्म के दशलक्षण (हिन्दी, गुजराती, मराठी, कन्नड़, तमिल, अंग्रेजी)	१६.००
१६.	क्रमबद्धपर्याय (हिन्दी, गुजराती, मराठी, कन्नड़, तमिल, अंग्रेजी)	१५.००
१७.	बिखरे मोती	१६.००
१८.	सत्य की खोज (हिन्दी, गुजराती, मराठी, कन्नड़, तमिल, अंग्रेजी)	१६.००
१९.	आप कुछ भी कहो (हिन्दी, गुजराती, मराठी, कन्नड़, अंग्रेजी)	१०.००
२०.	आत्मा ही है शरण	१५.००
२१.	सुक्ति-सुधा	१८.००
२२.	बारह भावना : एक अनुशीलन (हिन्दी, गुजराती, मराठी, कन्नड़, तमिल, अंग्रेजी)	१५.००
२३.	दृष्टि का विषय	१०.००
२४.	गागर में सागर	७.००
२५.	पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव (हिन्दी, गुजराती, मराठी)	१०.००
२६.	णमोकार महामंत्र : एक अनुशीलन	१०.००
२७.	रक्षाबन्धन और दीपावली	५.००
२८.	आचार्य कुन्दकुन्द और उनके पंचपरमागम	५.००
२९.	जिनवरस्य नयचक्रम	६.००
३०.	युगपुरुष कानजीस्वामी	५.००
३१.	वीतराग-विज्ञान प्रशिक्षण निर्देशिका	१२.००
३२.	पश्चाताप	७.००

३३.	मैं कौन हूँ (हिन्दी, गुजराती, मराठी, कन्नड़, तमिल, अंग्रेजी)	५.००
३४.	तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव	४.००
३५.	निमित्तोपादान (हिन्दी, गुजराती, मराठी, कन्नड़)	४.००
३६.	अहिंसा : महावीर की दृष्टि में (हिन्दी, गुजराती, मराठी, अंग्रेजी)	३.००
३७.	मैं स्वयं भगवान हूँ (हिन्दी, गुजराती, मराठी, अंग्रेजी)	४.००
३८.	रीति-नीति (हिन्दी, गुजराती)	३.००
३९.	शाकाहार (हिन्दी, गुजराती, मराठी, कन्नड़, अंग्रेजी)	२.५०
४०.	तीर्थंकर भगवान महावीर (हिन्दी, गुजराती, मराठी, कन्नड़, तमिल, अंग्रेजी)	२.५०
४१.	चैतन्य चमत्कार	४.००
४२.	गोली का जवाब गाली से भी नहीं (हिन्दी, गुजराती, मराठी)	२.००
४३.	गोम्मटेश्वर बाहुबली (हिन्दी, अंग्रेजी)	१.००
४४.	वीतरागी व्यक्तित्व : भगवान महावीर	२.००
४५.	अनेकान्त और स्याद्वाद	२.००
४६.	शाश्वत तीर्थधाम सम्मेदशिखर	१.५०
४७.	सार समयसार	१.५०
४८.	बिन्दु में सिन्धु (हिन्दी, गुजराती)	२.५०
४९.	बारहे भावना एवं जिनेन्द्र वन्दना	२.००
५०.	कुन्दकुन्द शतक पद्यानुवाद	२.००
५१.	शुद्धात्म शतक पद्यानुवाद	१.००
५२.	समयसार पद्यानुवाद	३.००
५३.	योगसार पद्यानुवाद	०.५०
५४.	समयसार कलश पद्यानुवाद	३.००
५५.	द्रव्यसंग्रह पद्यानुवाद	१.००
५६.	अष्टपाहुड़ पद्यानुवाद	३.००
५७.	अर्चना जे.बी.	१.००
५८.	कुन्दकुन्द शतक (अर्थ सहित) (हिन्दी, गुजराती, कन्नड़, अंग्रेजी)	१.२५
५९.	शुद्धात्मक शतक (अर्थ सहित) (हिन्दी, कन्नड़)	१.००
६०.	बालबोध पाठमाला भाग-२ (हिन्दी, गुजराती, मराठी, कन्नड़, तमिल, बंगाली, अंग्रेजी)	३.००
६१.	बालबोध पाठमाला भाग-३ (हिन्दी, गुजराती, मराठी, कन्नड़, तमिल, बंगाली, अंग्रेजी)	३.००
६२.	वीतराग-विज्ञान पाठमाला भाग-१ (हिन्दी, गुजराती, मराठी, कन्नड़, बंगाली, अंग्रेजी)	४.००
६३.	वीतराग-विज्ञान पाठमाला भाग-२ (हिन्दी, गुजराती, मराठी, कन्नड़, बंगाली, अंग्रेजी)	४.००
६४.	वीतराग-विज्ञान पाठमाला भाग-३ (हिन्दी, गुजराती, मराठी, कन्नड़, बंगाली अंग्रेजी)	४.००
६५.	तत्त्वज्ञान पाठमाला भाग-१ (हिन्दी, गुजराती, मराठी, कन्नड़, अंग्रेजी)	५.००
६६.	तत्त्वज्ञान पाठमाला भाग-२ (हिन्दी, गुजराती, मराठी, कन्नड़, अंग्रेजी)	६.००